1853 का चार्टर अधिनियम

1833 ई० के पश्चात ज्यों-ज्यों चार्टर के नवीनीकरण का समय समीप आ रहा था, ब्रिटिश संसद में यह मांग बढ़ती जा रही थी कि इंगलैंड में कम्पनी और सरकार के द्वैध शासन को समाप्त की जाए। वस्तुतः यह मांग न्याय संगत थी। निदेशकों के बोर्ड का कोई लाभ अथवा अन्य नहीं रह गया था। निदेशकों के बोर्ड तथा नियंत्रण बोर्ड के कार्यों में अनावश्यक देरी ही होती थी तथा व्यय भी बढ़ता था।

यह मांग भारत में प्रेजिडेन्सियों के शासकों से भी एक आवेदन पत्र के द्वारा आ चुकी थी। सुझाव यह था कि अंग्रेजी सरकार का एक राज्य सचिव (Secretary of State) तथा उनकी एक सलाहकार परिषद को ही भारतीय कार्य-भार को संभालना चाहिए।

सन् 1833 के चार्टर अधिनियम द्वारा जो उदार घोषणाएं की

गई थी व्यवहार में उनका पालन नहीं किया गया। वस्तुतः अब तक एक भी भारतीय को कार्यपालिका के किसी ऊँचे पद पर नियुक्त नहीं किया गया था। इससे भारतीयों में असंतोष होना स्वाभाविक था। अतः बंगाल, मद्रास और बम्बई तीनों प्रान्तों के निवासियों ने पार्लियामेन्ट के पास इस आशय के प्रार्थनापत्र भेजे कि भारत पर शासन करने का अधिकार दुबारा कंपनी को नहीं दिया जाए, वरन एक भारत सचिव तथा उसकी परिषद को सौंपा जाए। इसके अतिरिक्त उन्होंने भारतीय शासन में कुछ सुधारों की माँग की। संभवतः ये भारतीय राजनैतिक जागृति के प्रथम प्रत्यक्ष प्रमाण थे।

इसके अलावे यह भी अनुभव किया गया था कि 1833 के चार्टर एक्ट द्वारा कानून बनाने के लिए स्थापित की गई व्यवस्था भी अपर्याप्त है। यह भी माँग की गई थी कि गवर्नर जनरल को बंगाल का गवर्नर नहीं रहना चाहिए क्योंकि ऐसी अवस्था में वह प्रायः बंगाल का ही पक्ष

Page No. ____
Date

लेगा। इसके अतिरिक्त इस बीच वर्षों में बहुत से प्रदेशीय तथा राजनीतिक परिवर्तन हो चुके थे। सिंध (1843) तथा पंजाब (1849) अंग्रेजी साम्राज्य में सम्मिलित किये जा चुके थे। उन्होंने द्वारा बहुत सी भारतीय रियासतों को भी ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित किया जा चुका था। अतः साम्राज्य का क्षेत्रफल अत्यधिक हो चुका था। इन नए प्रदेशों का संवैधानिक प्रावधान भी करना था।

यह भी मांग थी कि शक्ति का विकेन्द्रीकरण किया जाए तथा भारतीय लोगों को अपने मामलों के प्रबन्ध में भाग दिया जाना चाहिए। इंगलैंड में इस विचार से कुछ लोग भी सहमत थे। उदाहरण के रूप में 1858 के अप्रैल में लार्ड डरबी (Lord Derby) ने संसद में इस तथ्य पर बहुत बल दिया था कि "यह हमारा मानवता, परोपकार, नैतिकता तथा धर्म के नाम पर आवश्यक कर्तव्य है कि सुरक्षा, बुद्धिमता तथा विवेक को

ध्यान में रखते हुए स्वीकृत शीघ्रातिशीघ्र भारतवासियों को अपने आन्तरिक मामलों के निरीक्षण का अधिकाधिक कार्य-भार शनैः शनैः दे दिया जाना चाहिए।" ऐसे वातावरण में अंग्रेजी संसद को 1853 में चार्टर नवीनीकरण के प्रश्न पर विचार-विमर्श करना पड़ा। संसद ने दो समितियाँ कंपनी के मामलों की जाँच करने के लिए नियुक्त की और उनकी रिपोर्ट के आधार पर ही 1853 का एक्ट बनाया गया तथा पारित किया गया।

एक्ट की धाराएं — या प्रावधान

गृह सरकार - इस अधिनियम द्वारा कंपनी का अधिकार-पत्र फिर से स्वीकार किया गया, परंतु इसकी अवधि के संबंध में यह कहा गया कि जब तक पार्लियामेंट कोई दूसरी व्यवस्था नहीं कर लेता है, तभी तक कंपनी का शासन रहेगा।

1) कंपनी के चार्टर अनिश्चित काल के लिए पुनरावर्तन किया गया।

② - यह भी व्यवस्था की गई कि कि नियंत्रण बोर्ड, उसके सचिव तथा अन्य पदाधिकारियों का वेतन तो अंग्रेजी संसद नियत करेगी

② नियंत्रण अधिकरण के प्रधान का वेतन मंत्रिमंडलीय मंत्री के बराबर अर्थात 5 हजार पौंड निश्चित कर दिया गया और अब भारतीय कोष से दिया जाने के परंतु धन कंपनी देगी।

③ कंपनी के निदेशकों की संख्या 24 से घटाकर 18 कर दी गई जिसमें से 6 को क्राउन द्वारा मनोनीत किया जाना था।

भारत के विषय में –

① • संश्रावित सेवा की नियुक्तियों के मामले में निदेशकों का संरक्षण समाप्त हो गया क्योंकि नियुक्तियाँ अब एक प्रतियोगिता परीक्षा (competitive examination) द्वारा की जाने लगीं, जिसमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखा गया। 1854 में एक समिति, मैकाले जिसके अध्यक्ष थे, नियुक्त की गई ताकि इस योजना को कार्यान्वित किया जा सके।

• निदेशकों के बोर्ड को यह भी अनुमति दी गई कि वह नई प्रेसिडेंसियाँ बना सके अथवा पुरानी प्रेसिडेंसियों की सीमाओं में परिवर्तन कर सके। इस आज्ञा द्वारा 1859 में पंजाब में एक उपराज्यपाल (Lieutenant Governor) की नियुक्ति की गई।

• यह भी व्यवस्था की गई कि क्राउन इंग्लैंड में एक विधि आयोग

संकलन को अंतिम रूप दिया।

भारतीय दंड संहिता तथा दीवानी और फौजदारी प्रक्रियाओं

Page No.
Date

आयोग नियुक्त करे जो भारतीय विधि आयोग (जो इस समय तक अपना कार्यकाल समाप्त कर चुका था) द्वारा भेजी गई रिपोर्टों तथा कानूनों के मसविदों का निरीक्षण कर सके तथा विधान बनाने के लिए अपने सुझाव दे सके। इस कमीशन ने ही

भारत में विधान बनाने के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए। अधिनियम द्वारा भारतीय प्रशासन के संबंध में कंपनी की शक्तियों को बहुत कम कर दिया गया और अधिनियम की भाषा से यह स्पष्ट हो गया कि अब कंपनी के शासन का अंत होने में केवल थोड़ा सा समय ही शेष रह गया है।

भारत में कार्यकारी तथा विधान संबंधी कार्यों के पृथक्करण की भावना से विधान कार्यों के लिए अन्य सदस्यों का प्रबंध किया गया।

गवर्नर-जनरल की कार्यकारी परिषद में विधि सदस्य को अब पूर्ण सदस्य बना दिया गया अर्थात जो कुर्सी लॉर्ड मैकाले के लिए की गई थी अब वह आने वाले सभी विधि सदस्यों पर लागू होगी।

अधिनियम का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व यह था कि इसके

Page No. ____
Date

द्वारा पहली बार भारत के लिए एक पृथक विधायी परिषद की व्यवस्था की गई। इस परिषद में 12 सदस्य होने थे: गवर्नर-जनरल, मुख्य सेनापति, गवर्नर-जनरल की परिषद के 4 सदस्य और 6 अतिरिक्त सदस्य। ये 6 अतिरिक्त सदस्य - बंगाल का मुख्य न्यायाधीश, कलकत्ता सुप्रीम कोर्ट का एक न्यायाधीश और मद्रास, बंगाल, बम्बई और आगरा (उ-प० प्रांतों या आधुनिक U.P) — इन 4 प्रांतों के प्रतिनिधि के रूप में ~~चार ऐसे नागरिक अधिकारी होने थे जिन्हें सेवा कार्य में 10 वर्ष हो चुके हों।~~

एक-एक प्रतिनिधि सम्मिलित होगा।

प्रान्तीय प्रतिनिधि वे असैनिक पदाधिकारी होने थे जिनकी कंपनी में न्यूनतम सेवा काल 10 वर्ष का हो।

गवर्नर जनरल को दो अन्य असैनिक पदाधिकारी नियुक्त करने का भी अधिकार था, यद्यपि इस अधिकार का कभी प्रयोग नहीं किया गया।

इस विधान परिषद की कार्य-प्रणाली अंग्रेजी संसद के अनुसार

सम्राट हो चुका था, के सुझावों पर विचार करने के लिए एक

ही निश्चित की गई। ऐसे प्रश्न पूछे जा सकते थे तथा कार्यकारी परिषद को विधान परिषद के विधेयक पर निषेधाधिकार (Veto) का भी अधिकार था। परिषद में वाद-विवाद मौखिक होता था और विधेयक को एक सदस्य के स्थान पर प्रवर समिति (Select Committee) को सौंपा जाता था। इस विधान परिषद का कार्य गोपनीय नहीं अपितु सार्वजनिक रूप से होता था। समाचार-पत्रों के प्रतिनिधि उपस्थित हो सकते थे, और परिषद की कार्यवाही समाचार-पत्रों में प्रकाशित की जाती थी और जनता के लिए उपलब्ध थी।

अधिनियम से भारतीय विधि आयोग, जो

अधिनियम का मूल्यांकन —

यह अधिनियम दो परस्पर विरोधी विचारधाराओं के बीच एक समझौता था। जो लोग कंपनी को बनाए रखना चाहते थे वे इस बात से संतुष्ट थे कि जब तक संसद ऐसा न चाहे कंपनी कार्य करती

रहेगी।

जो लोग कंपनी की समाप्ति चाहते थे उन्हें इस बात का संतोष था कि निदेशकों की संख्या 24 से घटाकर 18 कर दी गई थी, जिसमें से 6 क्राउन द्वारा मनोनीत किए जाते थे। गणपूर्ति (quorum) 10 की थी अर्थात यदि कुछ निदेशक न भी आएं तो सरकार के प्रतिनिधि अपनी बात मनवा सकते थे और निदेशकों का संरक्षण समाप्त हो गया था।

अपने वास्तविक कार्यरूप में इस नवगठित विधान परिषद ने भारतीय सरकार की समस्त रचना को परिवर्तित करने का प्रयास किया। अधिनियम बनाने वालों की इच्छा के विरुद्ध यह विधान परिषद एक प्रकार का ऐंग्लो-इंडियन हाउस ऑफ कॉमन्स (Anglo-Indian House of Commons) ही बन गया, जिसमें कार्यकारिणी के कार्यों पर आक्षेप होते थे और उसे गोपनीय पत्रों को भी परिषद के सम्मुख रखना पड़ता था। दूसरे, भारत सचिव का

यह सुझाव कि विधान सभा परिषद् कानून बनाने से पूर्व भारत सचिव की अनुमति प्राप्त करे, इस परिषद् ने स्वीकार नहीं किया। तथा (1853) से पूर्व निदेशकों तथा भारत सचिव द्वारा प्रस्तावित कानून भी पारित नहीं किए। इसके विपरीत इसने स्वतंत्र रूप से कानून बनाने का अधिकार मांगा।

वास्तव में आरम्भ से ही इस विधान परिषद् ने जो स्वतंत्रता की भावना प्रदर्शित की उससे इस अधिनियम के कर्ता सर चार्ल्स वुड जो नियंत्रण बोर्ड के प्रधान थे, बहुत क्रुद्ध हुए। इस विषय में सन्देह को दूर करने की भावना से उन्होंने यह घोषणा की, "मैं इस विधान-परिषद को भारत में संवैधानिक संसद के आरम्भ का मुख्य केन्द्र नहीं मानता जैसा कि कुछ, तरुण भारतीय लोग समझते हैं।" परंतु डलहौजी ने स्पष्ट किया कि उसने इस विधान परिषद को विधि द्वारा निर्धारित सीमा से अधिक शक्ति प्रदान नहीं की है।

जो भी हो 1853 के अधिनियम

के द्वारा विधान परिषद का गठन तथा परिचलन उन्नीसवीं शताब्दी के महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रकरणों में से एक था।

1853 के अधिनियम द्वारा 1833 की सुधार घोषणा को व्यावहारिक रूप प्रदान करने का कार्य किया गया। अब सेवाओं में नामजदगी का सिद्धान्त समाप्त हो गया और कंपनी के महत्वपूर्ण पदों को प्रतियोगी परीक्षाओं के आधार पर भरने की व्यवस्था की गई।

लेकिन इस समस्त अधिनियम की सबसे बड़ी त्रुटि यह थी कि भारतीयों को अपने संबंध में भी कानून बनाने की अनुमति नहीं दी गई। इस अधिनियम की भर्त्सना करते हुए सर बार्टल फ्रेयर ने कहा था कि, "यह करोड़ों व्यक्तियों के लिए विधि बनाने का ऐसा विपदजनक प्रयोग था जिसमें उन्हें विद्रोह के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं था जिससे वे यह कह सकें कि अमुक कानून हमारे अनुकूल है अथवा प्रतिकूल।

अधिनियम का महत्व -

1853 का अधिनियम भी एक महत्वपूर्ण संवैधानिक कदम है। कंपनी के अधिकार-पत्र को निश्चित अवधि के लिए न बढ़ाकर यह स्पष्ट कर दिया कि इसका अंत बहुत निकट है। 1858 में यही हुआ भी। कंपनी से सत्ता का हस्तांतरण संसद के हाथों में हो गया। अधिनियम ने एक पृथक विधायिका परिषद की बुनियाद डालकर पहली बार सरकार के विधायिका-कार्यों को कार्यपालिका-कार्यों से पृथक किया गया। 1833 के अधिनियम की धारा 87 को महारानी घोषणा को व्यवहारिक रूप दिया गया। भविष्य में कंपनी के उच्च लोकसेवकों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर खुली प्रतियोगिता के द्वारा होनी थी। यह अधिनियम संसद द्वारा उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम था। इंग्लिश लॉ कमीशन द्वारा भारतीय विधि आयोग के अधूरे कार्यों को पूरा करने का प्रयास सराहनीय रहा। क्योंकि अधिनियम में ने भारतीय विधि आयोग, जो समाप्त हो चुका था, के सुझावों पर विचार करने के लिए एक इंग्लिश लॉ कमीशन (Indian Law Commission)

को [illegible] की व्यवस्था की। इस कानून ने [illegible] भारतीय दण्ड संहिता, दीवानी और फौजदारी प्रक्रियाओं को संहिता को अंतिम रूप दिया। भारत के प्रशासनिक ढाँचे में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाए गए। बंगाल के लिए पृथक गवर्नर की व्यवस्था कर एक बड़ी कमी की पूर्ति की गई। संचालक मंडल की शक्तियों को घटाकर भी प्रभावहीन बना देना इस संवैधानिक महत्व की ओर संकेत करता था कि कंपनी सरकार का अंत निकट भविष्य में ही होने वाला है।

आलोचना — इन महत्वपूर्ण देनों के बावजूद अधिनियम दोषमुक्त नहीं था। इसने विधायिका परिषद में केवल अंग्रेज सदस्यों को ही स्थान दिया जिन्हें भारतीय दशाओं का ज्ञान नहीं था। इस प्रकार विधि-निर्माण के कार्य में भारतीयों के सहयोग की व्यवस्था नहीं की गई। अनेक प्रकार के भेदभावों, अत्यधिक खर्च तथा इंग्लैंड की दूरी के चलते भारतीयों को कंपनी सरकार में उच्च पद प्राप्त करना सपना ही रहा। इसके

classmate
Date
Page

आदिवासी बंगाल निवासियों की प्रांतीय स्वायत्तता की मांग की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया तथा सरकार ने द्वैध शासन व्यवस्था को समाप्त नहीं किया।